**ओ३म्**

**‘जन्म-मरण के दु:खों से मुक्ति के विवेक व वैराग्य आदि चार साधन’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

मनुष्य के जीवन का मुख्य उद्देश्य सभी प्रकार के दुःखों से मुक्ति व मोक्ष की प्राप्ति है। मुक्ति व मोक्ष एक प्रकार की जीवात्मा को पूर्ण स्वतन्त्रता है जिसमें शुभ व अशुभ कर्मों के फलों का भोग नहीं होता। यह स्वतन्त्रता वा मुक्ति हमें अपने मिथ्या व अशुभ कर्मों के फलों के भोग से चाहिये। जब भी कोई मनुष्य शुभ व अशुभ कर्म करता है तो उस कर्म की वासना का संस्कार उसके चित्त पर अंकित हो जाता है, प्रायः उसी प्रकार जिस प्रकार से आंखों के सामने चित्र आता है या कैमरे में चित्र अंकित होता है। इस कर्म का फल जब तक कर्म का कर्ता जीवात्मा वा मनुष्य भोग नहीं लेता, उसके जन्म व मृत्यु का क्रम चलता रहता है। यदि जन्म न हो अर्थात् जन्म-मरण का क्रम रूक जाये, तो इसके लिए हमें पूर्व जन्म-जन्मान्तरों में किए हुए सभी अशुभ कर्मों का फल भोग कर भविष्य में जन्म व मृत्यु के कारण शुभ व अशुभ कर्मों को बन्द करना होगा व परमार्थ के कर्म यथा ईश्वरोपासना, यज्ञ, दान, सत्संगति आदि कर्म ही करने होंगे। हम शुभ व अशुभ कर्म किसी इच्छा व लोभ के कारण ही करते हैं। इसके लिए हमें ज्ञान व विवेक की आवश्यकता है। विवेक से हमें यह ज्ञान हो जाता है कि अमुक कर्म का फल हमें क्या-क्या मिल सकता है। अतः हमें अपने कर्मों के फलों की आसक्ति को हटाना व दूर करना होगा व इसके साथ ही अशुभ कर्म जिससे दूसरे मनुष्य आदि प्राणियों का अपकार होता है, उन्हें भी पूर्णतः छोड़ना होगा। ऐसा होने पर ईश्वर का साक्षात्कार या तो मनुष्य वा योगी को हो जायेगा अन्यथा मनुष्य इस क्षेत्र में उत्तरोत्तर आगे बढ़ सकता है। मोक्ष कब मिलेगा यह तो मनुष्य की अपनी साधना व कर्मों के साथ ईश्वर की कृपा पर निर्भर है। हमारा व सभी विज्ञ मनुष्यों का उद्देश्य इस बात पर ही केन्द्रित होना चाहिये कि हम मोक्ष के अनुरुप साधना कर रहे हैं वा नहीं। यदि हमारी साधना, वेद व योगदर्शन के अनुसार होगी तो परिणाम भी उसके अनुरुप श्रेयस्कर ही होगा।

 महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में एक प्रश्न प्रस्तुत किया है कि कि **मुक्ति के क्या-क्या साधन हैं?** इसका उत्तर देते हुए वह कहते हैं कि मुक्ति के कुछ साधन वह सत्यार्थप्रकाश में लिख चुके हैं। उन साधनों के अतिरिक्त मुक्ति चाहने वालों को विशेष साधन यह करना है कि वह जीवनमुक्त अर्थात् जिन मिथ्याभाषणादि पाप कर्मों का फल दुःख है, उन को छोड़ सुखरूप फल को देने वाले सत्यभाषणादि धर्माचरण अवश्य करे। यह जीवनमुक्त अवस्था है। जो मुनष्य दुःख से छूटना और सुख को प्राप्त करना चाहे वह अधर्म को छोड़कर धर्म के कार्य अवश्य करे क्योंकि **दुःख का मूल कारण पापाचरण और सुख का धर्माचरण है। सत्पुरुषों के संग से विवेक अर्थात् सत्यासत्य, धर्माधर्म व कर्तव्याकर्तव्य का निश्चय अवश्य करें तथा इन्हें पृथक-पृथक जानें।** शरीर में विद्यमान पंचकोशों का ज्ञान प्राप्त करे व इनका विवेचन करें। एक **‘अन्नमय कोष’** जो त्वचा से लेकर अस्थिपर्यन्त का समुदाय पृथिवीमय अर्थात् पृथिवी के पदार्थों से निर्मित है। दूसरा **‘प्राणमय कोष’** जिस में **‘प्राण’** अर्थात् जो भीतर से बाहर जाता, **‘अपान’** जो बाहर से भीतर जाता? **‘समान’** जो नाभिस्थ होकर सर्वत्र शरीर में रस पहुंचाता, **‘उदान’** जिस से कण्ठस्थ अन्न पान (उदर में) खैंचा जाता और बल पराक्रम होता है, **‘व्यान’** जिस से सब शरीर में चेष्टा आदि कर्म जीव करता है। तीसरा **‘मनोमय कोष’** जिस में मन के साथ अहंकार, वाक्, पाद, पाणि, पायु और उपस्थ पांच कर्म-इन्द्रियां हैं। चैथा **‘विज्ञानमय कोष’** जिस में बुद्धि, चित्त, श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, जिह्वा और नासिका, ये पाचं ज्ञान-इन्द्रियां जिन से जीव ज्ञानादि व्यवहार करता है। पांचवा **‘आनन्दमय कोश’** जिस में प्रीति प्रसन्नता, न्यून आनन्द, अधिक आनन्द, आनन्द और आधार कारण रूप प्रकृति है, ये पांच कोष कहलाते हैं। इन्हीं से जीव वा मनुष्य सब प्रकार के कर्म, उपासना और ज्ञानादि व्यवहारों को करता है। इन पंच कोषों के ज्ञान से सामान्य जन प्रायः अपरिचित हैं। इनके विस्तृत ज्ञान के लिए योगदर्शन आदि दर्शन ग्रन्थ व उन पर प्राचीन व अर्वाचीन आर्यविद्वानों की टीकायें पढ़कर पाठकों को लाभ उठाना चाहिये।

 मनुष्य शरीर की तीन अवस्थायें-एक **‘जागृत’** दूसरी **‘स्वप्न’** और तीसरी **‘सुषुप्ति’** अवस्था कहलाती है। तीन शरीर हैं- एक **‘स्थूल’** जो यह दीखता है। दूसरा **पांच प्राण, पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच सूक्ष्म भूत और मन तथा बुद्धि इन सतरह तत्वों का समुदाय ‘सूक्ष्म शरीर’ कहलाता है। यह सूक्ष्म शरीर जन्ममरणादि में भी जीव के साथ रहता है।** इस के दो भेद हैं--एक भौतिक अर्थात् जो सूक्ष्म भूतों के अंशों से बना है। दूसरा स्वाभाविक जो जीव के स्वाभाविक गुण रूप है। **यह दूसरा अभौतिक शरीर मुक्ति में भी रहता है। इसी से जीव मुक्ति मतें सुख को भोगता है।** तीसरा शरीर जिस में सुषुप्ति अर्थात् गाढ़ निद्रा होती है, वह प्रकृति रूप होने से सर्वत्र विभु और सब जीवों के लिए एक वा एक समान है। **चौथा तुरीय शरीर वह कहाता है जिस में समाधि को प्राप्त कर मनुष्य वा योगी परमात्मा के आनन्दस्वरूप में मग्न होते हैं। इसी समाधि संस्कारजन्य शुद्ध शरीर का पराक्रम वा प्रभाव मुक्ति में भी यथावत् सहायक रहता है।** इन पंक्तियों में महर्षि दयानन्द जी ने बहुत गूढ़ ज्ञान प्रस्तुत किया है जिसे पाठकों को बार बार पढ़ना व समझने का प्रयास करना चाहिये और यथासम्भव साधकों व योगियों से इसकी चर्चा करनी चाहिये।

 जीव वा जीवात्मा इन सब कोषों एवं अवस्थाओं से पृथक है। जब मनुष्य की मृत्यु होती है तब प्रायः सभी लोग कहते हैं कि जीव निकल गया। यही जीव सब का प्रेरक, सब का धर्ता, साक्षीकर्ता व भोक्ता कहलाता है। जो कोई ऐसा कहे कि जीव कर्ता व भोक्ता नहीं है तो जानों कि वह मनुष्य अज्ञानी व अविवेकी है। ऐसे लोगों की संगति करने से मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति नहीं हो सकती, ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है। जीव से इतर व पृथक जो यह सब जड़ वा भौतिक पदार्थ हैं, इन को सुख-दुःख का भोग वा पाप-पुण्य कर्तृत्व कभी नहीं हो सकता। हां, इन जड़ व भौतिक पदार्थों के सम्बन्ध से जीव पाप-पुण्यों का कर्ता और सुख दुःखों का भोक्ता है।

 **जब इन्द्रियां अर्थों अर्थात् विषयों में, मन इन्द्रियों में और आत्मा मन के साथ संयुक्त होकर प्राणों को प्रेरणा करके अच्छे वा बुरे कर्मों में लगाता है तभी वह बहिर्मुख हो जाता है। उसी समय आत्मा के भीतर से आनन्द, उत्साह, निर्भयता और बुरे कर्मों को करने में भय, शंका व लज्जा उत्पन्न होती है। वह आनन्द, उत्साह, निर्भयता, भय, शंका व लज्जा आदि अन्तर्यामी परमात्मा की शिक्षा है। जो कोई इस शिक्षा के अनुकूल वर्तता है वही मुक्तिजन्य सुखों को प्राप्त होता है और जो विपरीत वर्तता है वह जन्म-मरण के बन्ध-जन्य दुःख भोगता है।**

महर्षि दयानन्द जी ने उपर्युक्त पंक्तियों में मुक्ति में सहायक विवेक अर्थात् यर्थाथ ज्ञान को प्रस्तुत किया है। जन्म-मरण के दुःख से मुक्ति के अन्य उपायों में **‘वैराग्य’, ‘षट्क सम्पत्ति’ तथा ‘मुमुक्षुत्व’** भी सम्मिलित हैं। सत्यार्थप्रकाश में इन पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है जिसके लिए इस ग्रन्थ का नौंवा समुल्लास पढ़ना आवश्यक है। हम आशा करते हैं कि इस समुल्लास को पढ़कर पाठक जीवन विषयक इस यथार्थ ज्ञान से परिचित होकर लाभ उठा सकते हैं और अपने जीवन की सही दिशा देकर अपनी दशा बदल सकते हैं। इससे न केवल मुक्ति के यथार्थ ज्ञान को जानकर लाभान्वित होंगे अपितु समाज, देश व विश्व भी इस ज्ञान से लाभान्वित होगा। हमारी दृष्टि में तो यह ज्ञान व विषय कक्षा प्रथम से स्नात्कोत्तर कक्षा तक अनिवार्य होना चाहिये। यदि हम इस ज्ञान से वंचित रहते हैं तो इसकी व्यक्तिगत हानि हमें तो होगी ही अपितु इससे देश व विश्व भी दुर्दशा को प्राप्त होगा व हो रहा है। आज का सारा विश्व अध्यात्म की उपेक्षा कर भौतिकवादी होकर अपने व अन्यों पर अन्याय व अत्याचार कर रहा है। कुछ व्यक्तियों के पास धन का अम्बार लगा है और कुछ को एक वा दो समय गेहूं की सूखी रोटी भी उपलब्ध नहीं है। युद्ध व युद्ध सामग्री पर देश व विश्व का बहुत बड़ा धन व्यय होता है, युद्ध होते रहते हैं व लाखों लोग अपने प्राणों से हाथ धोते हैं। **इसका एक प्रमुख कारण यथार्थ ज्ञान व विवेक का न होना है।** परहित व दान आदि की उच्च भावनायें प्रायः समाप्त हो गई लगती हैं। सर्वत्र स्वार्थ व इसकी पूर्ति के लिए लोग व्यक्तिगत व सामूहिक रूप से लगे हुए हैं। मनुष्य निर्मित विधि-विधान भी लोगों के निजी स्वार्थों के का पोषण करते हैं तथा नैतिक मूल्यों के अनुरूप जीवन व्यतीत करने वाले पीडि़त व दुःखी रहते हैं। यह स्थिति भविष्य में किसी बड़े दुःख का कारण प्रतीत होती है। अतः आज वैदिक-सत्य-यथार्थ व मनुष्य मात्र के एकमात्र वास्तविक धर्म के प्रचार व प्रसार की आवश्यकता सबसे अधिक है। जब तक वेदों को अपना उचित सथान नहीं मिलेगा, इस संसार का कल्याण व पूर्ण हित होना असम्भव है। लोग मत-मतान्तरों में विभक्त रहकर एक दूसरे को दुःख देते हुए स्वयं दुःखी रहेंगे और यह सिलसिला, शायद् इसी प्रकार से, चलता रहेगा।यथार्थ ज्ञान व इसके पोषक वैदिक धर्म के बिना मनुष्य को पूर्ण सुख व शान्ति कभी प्राप्त नहीं होगी। हमें यह भी अनुभव होता है कि वैदिक धर्म के अनुयायी जो प्रचार कर रहे हैं वह अपर्याप्त है जिसका प्रभाव नगण्य ही है। आज की परिस्थितियों के अनुरूप वेदों के प्रचार की प्रभावशाली योजनायें बनाकर व अपने स्वार्थों को दूर रखकर संगठित रूप से वेदों का प्रचार करना होगा। ऐसा होने पर ही भारत की अध्यात्म व परा विद्या बच सकेगी। इसके विपरीत केवल एकांगी भौतिकवादी जीवन व्यतीत करने से परिणाम भयंकर हो सकता है जैसा कुछ अतीत के विश्व युद्धों से हुआ था। हम सभी मित्रों वा पाठकों से सत्यार्थप्रकाश व वेदादि ग्रन्थों को अपने जीवन का एक अंग बनाने का आग्रह करते हैं। स्वाध्याय व साधना के इस कार्य को वह अपनी आजीविका के कार्यों से समय निकालकर कर सकते हैं। इससे उन्हें व्यक्तिगत व सामाजिक दोनों ही रूपों में लाभ होगा। हम यह भी स्पष्ट कर दें कि हम एक साधारण कोटि के साधक है परन्तु स्वाध्याय व चिन्तन-मनन से हमें यह विचार पाठकों तक पहुंचाने की प्रेरणा हुई। हम आशा करते हैं कि इससे पाठकों को लाभ हो सकता है। इति।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**